SEMESTER - 3

CC- 11

South Asia 1950 Onwards

- **इंडियन डायस्पोरा , पार्ट-2**

Vetted by :

प्रो० (डॉ०) सुरेंद्रकुमार

विभागाध्यक्ष, इतिहासविभाग

पटनाविश्वविद्यालय, पटना

संपर्क : 09835463960

Presented by:

शिप्रानंदन

अतिथिशिक्षक, इतिहासविभाग

पटनाविश्वविद्यालय, पटना

संपर्क :08604171178

nandan.shiprabhu@gmail.com

भारतीय डायस्पोरा (पार्ट-२)

औपनिवेशिक काल में भारतीय प्रवास :

मुग़ल साम्राज्य के पतन के साथ ही भारत में यूरोपीय कंपनियों का आगमन तीव्र हो गया। अन्य देशों की अपेक्षा ब्रिटिश कंपनी ने भारत के कई हिस्सों में विजय हासिल की और व्यापर और प्रशासन पर एकाधिकार स्थापित कर लिया। कंपनी के अधिकारियों ने भारत के बहार पूर्वी एशियाई क्षेत्रों में भी अपने व्यापार का विस्तार करना प्रारम्भ किया। अंग्रेजों ने इन क्षेत्रों से मसाले,गन्ने,नील,चाय आदि को प्रपात करना चाहा,जिसके लिए इन अल्प जनसँख्या वाले क्षेत्रों में भारी मात्रा में सस्ते मजदुर चाहिए था। यही प्रक्रिया अंग्रेजों ने दक्षिणी अफ्रीकी क्षेत्रों में अपनाई। इस प्रकार औपनिवेशिक काल में जो लोग प्रवासी होते थे,वह ज्यादातर ब्रिटिश कॉलोनी,फ़्रांसिसी और पुर्तगाली कॉलोनी में भेजे जाते थे। ये प्रवासी मुख्यतः बागान श्रमिक के रूप में ले जाये जाते थे। औपनिवेशिक काल में भारतीय उत्प्रवास को तीन भागों में बांटा जा सकता है -

१) बलपूर्वक मजदूरों का उत्प्रवास

२) कंगनी और मिस्त्री श्रमिक उत्प्रवास

३) मुक्त उत्प्रवास

बलपूर्वक मजदूरों का उत्प्रवास ::

फ्रेंच क्रांति के समय दास प्रथा समापत करने की कोशिश की गई थी,लेकिन वांछित सफलता नहीं मिल पाई थी। ब्रिटिश शासन दास प्रथा को समाप्त कर देने के लिए कटिबद्ध थी। यह सोच तो मानवतावादी थी परन्तु इस सोच का सबसे बड़ा कारण था कि उन्नीसवीं सदी के प्रारंभिक दशकों में दास रखना भी काफी खर्चीला हो गया था। यूरोपियन लोग अपने देशों में देशों में दासों कि बढाती संख्या पर नियंत्रण भी लाना चाहते थे। अंततः ब्रिटिश सरकार ने भारी क्षतिपूर्ति देकर दास प्रथा सन १८३३ में कानूनी तौर पर समाप्त कर दिया गया इसलिए उपनिवेशों में ऐसे मजदूरों कि आवश्यकता हुई जो काम मजदूरी पे ज्यादा से ज्यादा काम कर सके। इस काम के लिए सरकार ने

भारतीय मजदूरों को अलग अलग उपनिवेशों में भेजना आरंभ कर दिया। सरकार इन मजदूरों से एक निश्चित समय के लिए इक़रारनामे पर दस्तखत करा लेती थी और उन्हें बागान में काम करने के लिए परमिट प्रदान करती थी। इसप्रकार के प्रवासन को गिरमिटिया मजदूरों का प्रवासन कहते हैं। इसके अंतर्गत श्रमिकों कि नियुक्ति कराइ जाती थी जिसमे भारतीय मजदूरों को चाय,कॉफ़ी,गन्ने आदि के खेतों में काम करना होता था,जिसके मालिक औपनिवेशिक सरकार के अधिकारी होते थे। इन मजदूरों को बिना इनके काम की और प्रवास की जानकारी दिए बिना बंधक बनाकर ले जाया जाता था। उत्तरप्रदेश,बिहार से इस प्रकार का अधिकांश प्रवास हुआ। इन मजदूरों को विभिन्न देशों के उपनिवेश जैसे-गुयाना,फिजी,त्रिनिदाद,जैमेका,फ़्रांसिसी गैडिलोपी और मर्टिनिकी के राज्यों में और सूरीनाम के डच उपनिवेश में ले जाया जाता था।

कंगनी और मेस्ट्री ::

मद्रास प्रेसीडेंसी के लोग अपने परिवार के साथ तथा कभी कभी पूरा गाँव ही एक साथ प्रवासन करता था। ये लोग भी सरकार द्वारा भेजे जाते थे,परन्तु किसी भी प्रकार के करार से बंधे नहीं होते थे,इस प्रवासन को कंगनी या मेस्ट्री प्रवासन कहा जाता था। कंगनिया प्रथा खासकर सीलोन या मलेशिआ में प्रचलित था और मेस्ट्री प्रथा मुख्यतः बर्मा में प्रचलित था।

मुक्त प्रवास :

इसके अंतर्गत वे श्रमिक आते थे जो अपनी मर्जी से विदेश में जाते थे। इसमें ज्यादातर ईस्ट अफ्रीका में रेल के निर्माण में कार्य करने के लिए लोग जाते थे,जिनके साथ कोई अनुबंध या साइन नहीं किया जाता था इसलिए ये लोग मुक्त होते थे। अपनी मर्जी से जा सकते थे और अपनी मर्जी से वापस आ सकते थे। इसमें भारतीय लोग जो प्रवास हुए थे वे लोग ग्रेट ब्रिटैन,कनाडा और अफ्रीका के कुछ देशों में गए थे। ये लोग मुख्यतः गुजरात व पंजाब के कुछ व्यापारी वर्ग के थे जो साउथ अफ्रीका एवं केन्या,तंजानिआ,युगांडा में गए थे। ये लोग औपनिवेश्विक सरकार द्वारा जबरन नहीं ले जाये जाते थे बल्कि इनलोगों को सरकार द्वारा आने जाने का किराया मात्र दिया जाता था। इन

औपनिवेशिक देशों में होने वाले अत्याचार एवं शोषण से बचने के लिए बड़े पैमाने पर भारतीय लोग इंग्लैंड व कनाडा भाग जाते थे,जो प्रवासी लोग यहाँ पर रह गए थे उनलोगों के पूर्वज भारत में ही रह गए जिनसे भारतीय डिएस्पोरिक लोगों की जानकारी मिलती है।

औपनिवेशिक काल में विभिन्न देशों में भारतीय प्रवास :

उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार विदेश में प्रवासी भारतियों की संख्या लगभग दो करोड़ चालीस लाख बताई जाती है। ये प्रवासी भारतीय सुखद भविष्य की खोज में विदेश गए थे और फिर वहीँ बस गए। इन विदेश में बसे हुए भारतियों को मुख्यतः दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। पहले वर्ग में वे भारतीय हैं जो १९वी सदी के पूर्वार्ध से २०वी सदी के पूर्वार्ध तक मौरीसस,गुयाना,त्रिनिदाद,दक्षिण अफ्रीका,सूरीनाम आदि देश में गिरमिट के रूप में विदेशी एजेंटों द्वारा गन्ने की खेती में काम करने के लिए बहला फुसलाकर सुखद भविष्य का सपना दिखाकर विदेश ले जाये गए थे और फिर गिरमिट की अवधि पूरी होने पर विदेश में ही बस गए। इन देशों में इन भारतियों की चौथी या पांचवी पीढ़ी निवास कर रही है। इनमे से बहुतों का भारत आना कभी नहीं हुआ पर वे भारत को अपने पूर्वजों की भूमि मानते हुए भारत से आत्मीय लगाओ रखते हैं। अपने भारतीय जीवन मूल्यों का सम्मान करते हैं और अपनी भाषा की सुरक्षा और प्रतिष्ठा के लिए निरंतर प्रयतनशील रहते हैं। इन भारतियों ने गिरमिट जीवन की कठोर यंत्रणाएँ तो सहन किया परन्तु गिरमिट का समय समाप्त होने पर नए देश को अपना लिया और उसके पुनर्निर्माण में उनकी बड़ी भूमिका रही। कालांतर में ये उस देश के प्रतिष्ठित नागरिक बने,सत्ता में उनकी भागीदारी भी रही। उनकी अपनी भाषा और संस्कृति को उस नए देश में सम्मान मिला। मौरीसस के शिव सागर राम गुलाम,फिजी के महेंद्र चौधरी,त्रिनिदाद के वासुदेव पांडे इसका उदाहरण हैं। संभवतः इसका कारण यह भी रहा कि इन देशों में प्रवासी भारतियों की संख्या पर्याप्त थी और देश के निर्माण में उनकी प्रमुख भूमिका भी रही। सन १९८४ में राजनीतिक सत्ता के परिवर्तन के पहले तक तो फीजी में प्रवासी भारतियों की संख्या देश की जसनसँख्या का लगभग ५२% तक थी जो कर्नल राम्बुका के सत्ता पलट प्रयत्न के कारण सन १९८७ ईस्वी में ४८ %तक रह गई थी और जो आज काम होते -होते ४०.१% रह गई है। प्रवासी भारतियों के संख्या बाहुल्य ने सर्वदा विदेश में उनकी अस्मित्ता को बनाये रखने में

उनकी सहायता की है। जिन देशों में भारतीय गिरमिट के रूप में आज भी इन देशों में मूल निवासियों की तुलना में भारतियों का अच्छा प्रतिशत है।

दूसरी कोटि में उन प्रवासी भारतियों की गणना की जा सकती है जो बीसवीं सदी के उत्तरार्ध में सामान्यतः भारत के स्वाधीन होने के बाद विकसित देशों में जैसे अमेरिका,कनाडा,जर्मनी,इंग्लैंड,हॉलैंड,ऑस्ट्रेलिआ,नूज़ीलैण्ड,पुर्तगाल,फ्रांस और खाड़ी के देशों में गए। वे वहां पहले अभियांत्रिकी,चिकित्सा,सुचना प्रौद्योगिकी और तकनीक आदि विविध विषयों की शिक्षा के लिए या कुशल/अकुशल श्रमिक कार्य के लिए गए और वहीं बस गए। इनका भारत आना - जाना निरंतर बना रहता है और ये सामान्यतः सुविधा भोगी समपन्न भारतीय के रूप में जाने जाते हैं। अपनाये गए नए देश के निर्माण में इनकी कोई विशिष्ट सामाजिक भूमिका नहीं रही। इसलिए पहली कोटि के भारतीयों की तरह देश की सत्ता में भी इनकी भागीदारी भी सामान्यतः नहीं रही। यद्दपि अपनी योग्यता के कारण वे व्यक्तिगत स्तर पर संपन्न नागरिक बने,अपने कार्य क्षेत्र में उन्होंने प्रसिद्धि भी पाई पर भारतीय जनवर्ग की उस नए अपनाये गए देश के निर्माण में विशेष भूमिका नहीं रही,इसलिए विदेश में उनकी विशेष सामाजिक छवि भी नहीं बनी। वे धन की लालसा में नए देश में आने वाले भारतीय माने गए। इसका प्रमुख कारण यह भी रहा कि मूल निवासियों कि तुलना में इनका प्रतिशत बहुत कम रहा और वे संगठित नहीं रहे।